उद्गार

; कवितासंग्रह

नन्दलाल भारती

वर्श–2010

तकनीकी सहयोगी
आजादकुमार भारती
अनुराग कुमार भारती

चित्रकार
षषि भारती

सर्वाधिकार–लेखकाधीन

सम्पर्क
मार्फत श्रीमती मनोरमा भारती
आजाद दीप, 15–एम–वीणा नगर ,इंदौर /म.प्र.!
दूरभाश–0731–4057553 चलितवार्ता 09753081066
Email- nlbharatiauthor@gmail.com
http://www.nandlalbharati.mywebdunia.com http://www.nandlalbharati.bolg.co.in
hindisahityasarovar.blogspot.com

1.उम्र का मधुमास

झांक कर आगे –पीछे,
देखकर बेदखली बेबसी की दास्तान

ढो कर चोट का भार, पाकर तरक्की से दूर
लगने लगा है
गिरवी रख दिया उम्र का मधुमास ।
ना मिली सोहरत ना मिली दौलत
गरीब के गहने की तरह ,
चन्द सिक्कों के बदले साहूकार की तिजोरी में
कैद हो गया उम्र का मधुमास ।
पतझर झराझर उम्र के मधुमास
बोये सपने तालिम की उर्वरा संग
सींचे पसीने से ,अच्छे कल की आस
बंटवारे की बिजली गिर पड़ी भरे मधुमास ।
सपने छिन्न–भिन्न,राहे बन्द
आहे भभक रही
ये कैसी बंदिषे सांसे तड़पतड़प कह रही
किस गुनाह की सजा निरापद को
हक लूट गये भरे मधुमास ।
तालिम की षवयात्रा श्रेश्ठता का मान
दबंगता की बौझार श्रम का अपमान
गुहार बनता गुनाह होता सपनो का कत्ल
आज गिरवी कल से भी ना पक्की आस
डूबत खाते का हो गया षोशित का मधुमास ।
लहलहाता आग का ताण्डव
षोशित गरीब की नसीब होती नित कैद
उड़ान पर पहरे, सम्भावना पर बस आस
मन तड़प–तड़प कहता, ना मान ना पहचान
कहां गिरवी रख दिया उम्र का मधुमास ।
दीन–षोशितों की पूरी हो जाती आस
नसीब के भ्रम से परदा हट जाता,
मिलता जल–जमीन पर हक बराबर
तरक्की का अवसर समान
ना जाति–धर्म–क्षेत्रवाद की धधकती आग
मृतषैय्या पर ना तड़पता मधुमास
ना तड़प–तड़प कर कहता
कहां गिरवी रख दिया उम्र का मधुमास । नन्दलाल भारती 11.12.09

2.मधुमास.

भविश्य के बिखर पत्तों के निषान पर
आने लगा है उम्र का नया मधुमास
रात दिन एक हुए थे,
पसीने बहे,खुली आंखों में सपने बसे
वाद की षूली पर टंगे गये अरमान
व्यर्थ गया पसीना मारे गये सपने
मरते सपनो की कम्पित है सांस ।
सम्भावना की धड़क रही है नब्जें
अगले मधुमास विहस उठे सपने
नसीब के नाम ठगा गया कर्म
मरूभूमि से उठती षोल की आंधी
राख कर जाती सपनो की जवानी
कांप उठता गदराया मन
भेद की लपटो से सुलग जाता बदन ।
तालिम का निकल चुका जनाजा
योग्यता का उपहास सपनो का बजता नित बाजा
जीवन में खिलेगा मधुमास बाकी है आस
पसीने से सींचे कर्मबीज से उठेगी सुवास ।
उजड़े सपनों के कंकाल से
छनकर गिरती परछार्यी में
सम्भावनाओ का खोजता मधुमास
सुलगते रिष्ते भविश्य के कत्लेआम
उमंगो पर लगा जादू टोना
मरते सपने बने ओढना और बिछौना ।
सम्भावनाओं के संग जीवित उमंग
कर्म का होता पुर्नजीवित भरोसा
साल के पहले दिन
कर्म की राह गर्व से बढ जाता
सम्भावना की उग जाती कलियां
जीवन के मधुमास से छंट जाये आधियां ।

पूरी हो जाये मुराद वक्त के इस मधुमास

लूटे भाग्य को मिले उपहार बासन्ती
कर्म रहे विजयी तालिम ना पाये पटकनी
जिनका उजड़ा भविश्य उन्हे मिले जीवन का हर मधुमास
हो नया साल मुबारक,
गरीब–अमीर सब संग–संग गाये गान
जीवन की बाकी प्यास
भविश्य के बिखरे पत्तों के निषान पर
छा जाये मधुमास.... नन्दलाल भारती 9.12.09

3.नदी

नदी की पहचान है उसका प्रवाह ,
नदी का अस्तित्व भी है प्रवाह
जीवन की गतिषीलता का संदेष है नदी
संस्कृति का जीवन्त उपदेष है नदी ।
नदी का निरन्तर प्रवाह
जीवन में भी है प्रवाह ।
थमना जीवन नही है
थम गया तो जीवन नही है।
नदी नदी नही है ,
जब तक प्रवाहित नही है
अफसोस नदी थकने लगी है ।
नदी में जल का कल–कल प्रवाह
संस्कृति और जीवन का भी है प्रवाह ।
नदी का प्रवाह थमने लगा है,
जीवन कठिन लगने लगा है
कारण आदमी ही तो है
आओ कसम ले ,ना बनेगे नदी की राह में बाधा
नदी का अस्तित्व खत्म हो गया ना
हमारा भी नही बचेगा ।
नन्दलाल भारती 03.12.09

4.मुसीबतों के बोझ बहुत ढोये हैं
खून के आंसू रोये है ।
जमाने से घाव पाये है
कामयाबी से खुद को दूर पाये है।
उम्र गुजर रही है,
पत्थरो पर लकीर खींचते खीचते
गुजर रहा है दिन, सम्भावनाओं की पौध सींचते–सीचते ।
गम नही,ना मिली कामयाबी,
ना पत्थर पसीजा पाये खुषी है तनिक,
काबिलियत के तिनके रूप हैं पाये ।नन्दलाल भारती... 15.01.10
5.कल जैसे दहकती हुई आंग था
लोगों को जलने का डर था ।
दुत्कार थी,
फटकार थी ।
शणयन्त्र की बिसात थी
छींटाकसी की बौझार थी ।
आंसू कुसुमित होने लगा है
अब तो कांटा भी
अपना कहने लगा है । नन्दलाल भारती 15.01.2010
6.आज का आदमी
इतना मतलबी हो गया है
आदमी के आंसू से खुद का कल सींचने लगा है ।
अरे आदमी को आंसू देने वालो
मत भूलो
आदमी कुछ भी नही ले गया है ।
ऐसी कैसी खूनी ख्वाहिष
कि आदमी
आदमी को आंसू देकर
खुष रहने लगा है । नन्दलाल भारती 27.10.09
0000

7.जान गये होगे सुलगती तकदीर का रहस्य,
पहचान गये होगे तरक्की से दूर फेंके
आदमी की कराह ।
ना सुलझने वाला रहस्य
निगल रहा है हाषिये के आदमी का आज,
कल मान–सम्मान भी ।
सुलझाने का प्रयास निरर्थक हो जाता है,
पुराना प्रमाण–पत्र छाती–तान लेता है,
षुरू हो जाता है फजीहतों का दौर ।
फजीहतों का दौर षदियों से जारी है,
आदमी बेगाना लगने लगा है
ये दौर षायद तब तक जारी रहे
जब तक वर्णव्यवस्था कायम रहे ।
क्या आदमी का फर्ज नही ?
आदमी के साथ न्याय करे,
हक और मानवीय समानता का अधिकार दे । नन्दलाल भारती 20.10.09

9.उम्र

वक्त के बहाव में खत्म हो रही है उम्र
बहाव चट कर जाता है
हर एक जनवरी को जीवन का एक और वसन्त ।
बची खुची वसन्त की सुबह
झरती रहती है तरूण कामनायें ।
कामनाओं के झराझर के आगे
पसर जाता है मौन
खोजता हूं
बिते संघर्श के क्षणों में तनिक सुख ।
समय है कि थमता ही नही
गुजर जाता है दिन ।
करवटों में गुजर जाती है राते
नाकामयाबी की गोद में खेलते–खेलते
हो जाती है सुबह
कश्टों में भी दुबकी रहती है सम्भावनायें ।

उम्र के वसन्त पर
आत्ममंथन की रस्साकस्सी में
थम जाता है समय
टूट जाती है उम्र की बाधाये
बेमानी लगने लगता है
समय का प्रवाह और डंसने लगते है जमाने के दिये घाव
सम्भावनाओं की गोद में अठखेलियां करता
मन अकुलाता है,रोज–रोज कम होती उम्र में
तोड़ने को बुराईयों का चक्रव्यूह
छूने को तरक्की के आकाष ।
नन्दलाल भारती

10–राह

ये दीप आंधियों के प्रहार से, थकने लगा है,
खुली आंखो के सपने लगने लगे है धुधले
हारने लगी है अब उम्मीदें
भविश्य के रूप लगने लगे है कारे–कारे ।
ल्गने लगा है होंठ गये हो सील
पलको पर आंसू लगे लगे है पलने ।
वेदना के जल,उम्मीद के बादल लेकर लगे है चलने ।
थामें करूणा कर जीवन पथ पर निकल पड़ा
पहचान लिया जग को यह दीप थका ।
उम्र के उड़ते पल,पसीने की धार झराझर
फल दूर नित दूर होता रहा
सुधि से सुवासित दर्द से कराहता रहा ।
कर्म के अवलम्बन को ज्वाला का चुम्बन डंस गया
घायल मन के सूने कोने में, आहत सांस भरता गया ।
भेद की ज्वाला ने किया तबाह
प्त्थर पर सिर पटकते दिल गुजर रहा
घेरा तिमिर, बार–बार संकल्प दोहराता रहा ।
जीवन का स्पन्दन चिर व्यथा को जाना।
दहकती ज्वाला की छाती पर चिन्ह है बनाना
याद बिखरे विस्मृत,क्षार सार माथे मढ जाना
छाती का दर्द भेद के भूकम्प का आ जाना।

कब लौटेगे दिन कब सच होगा,
पसीने का झरते जाना
उर में अपने पावस ,
जीवन का उद्देष्य आदमियत की राह है जाना ।

11–सच्चा धन

अक्षम हूं गम नही,चमकते सिक्कों से,
भरपूर पास नही है जो।
गम मुझे भी डंसता है
ये नही कि उंचा पद और दौलत का ढेर पास नही ।
इसलिये कि आज यही तय करने लगा है
आदमी का कद और बहुत कुछ ।
आज कोई नई बात नही सदियों से
सदकर्म और परोपकार की राह पर चलने वाला
संघर्शरत् रहा है ।
आर्थिक कमी को झेलते हुए
काल के गाल पर नाम लिखा है ।
मुझे तो यकीन है आज भी पर उन्हे नही
क्योंकि मेहनत ईमान की रोटी,तरक्की नही है
अभिमान के षिखर पर बैठे लोगों के लिये ।
मैं खुष हूं,यकीन से कह सकता हूं
मेहनत,ईमान की रोटी खाने वालो
नेकी की राह पर चलने वालों के पास
अनमोल रत्न होता है
दुनिया के किसी मुद्रा के बस की बात नही
जो इनहे खरीद सके,यह बड़ी तपस्या का प्रतिफल है ।
यह प्रतिफल ना होता तो मुझ जैसे ,
अक्षम के पास भी दौलत का ढेर होता
पर आज का कद ना होता
जो पद और दौलत के ढेर से उपर उठाता है ।
कोई गिला–षिकवा नही कि ,
पद और दौलत से गरीब आर्थिक कमजोर हूं ।

है गिला –षिकवा भी ,
उनसे जो आदमी को बांट रहे है
धन को सब कुछ कह रहे है,
पर मैं और मेरे जैसे नही ।
मैं तो खुष हूं क्योंकि सम्मान धन के ढेर मे नही
सद्भावना,मानवीय समानता और सच्ची ईमानदारी में है,
जो समय के पुत्रो को नसीब होता है ।

12–जागो ।

जागो अब बीत गयी काली रातें,
नव एहसास,नव उमंग द्वार आया नवप्रभात
बांधों गांठ–गांठ नव उम्मीद संग नव चेतन को
तेजस्वी नवप्रभात कूद पड़ो नव परिवर्तन को
जागो अब बीत गयी काली रातें..........
संवृद्ध चिन्तन चरित्रवान विष्वगुरू की पहचान,
परिश्रमी,वफादार जिम्मेदार युवा षक्ति महान
अलौकि अनुराग आजादी के लिये कटे ढेरो षीष
कलपें ना अमर षहीदों की आत्माये बना रहे आषीष
जागो अब बीत गयी काली रातें.............
अपनी सरकार अपना संविधान अपने लोग
पर क्या नैतिक पतन भ्रश्टाचार का लग गया रोग
पिछड़ापन असुरक्षा,उत्पीड़न का माहौल विशैला
अशिक्षा भय–भूख जातिभेद का रूप विशैला
जागो अब बीत गयी काली रातें.............
सख सर्वोतम कानून व्यवस्था पर डंस जाती ढील–पोल
ना चरित्र टिकाउं यहां ना कमजोर के आंसू का मोल
नवोदय हुआ तरक्की का ना करें वक्त बर्बाद
पल–पल का जीवन जनहित राश्ट्रधर्म होवै आबाद
जागो अब बीत गयी काली रातें..............
करे दायित्वों का पालन बढाये जगत में देष का मान
ना जातिधर्म के झगड़े,देष–धर्म पहले अपनाये इंसान
संवृद्ध बने राश्ट्र फलेफूले समतावाद,नैतिकता को मजबूत बनाये

आजाद अनुराग अलौकिक हम भारत के वासी
आओ राश्ट्र निर्माण में हाथ बढाये
जागो अब बीत गयी काली रातें.................

13– आते हुए लम्हों

हे आते हुए लम्हों बहार की ऐसी बयार लाना
नवचेतना,नव पविर्तन नव उर्जावान बना जाना।
अषान्ति विशमता,मंहगाई की प्रेत छाया ना मड़राये
ना उत्पाद ना भेदभाव,ना रक्तपात ना ममता बिलखाये ।
मेहनतकष धरती का सूरज चांद नारी का बढे सम्मान,
ना तरसे आंखे मेहनत पाये भेद रहित सम्मान ।
जल उठे मन का दीया,तरक्की के आसार बढ जायें
मां बाप की ना टूटे लाठी,
कण–कण में ममता समता बस जाये ।
भेद का दरिया सूखे दरिन्दों का ना गूंजे हाहाकार
इंसानों की बस्ती में बस गूंजे,इंसानियत की जयकार ।
देष और मानव रक्षा के लिये हर हाथ थामें तलवार
तोड़ दीवारे भेद की सारी,देष–धर्म के लिये रहे तैयार ।
जाति धर्म के ना पड़े ओले,
अब तो मौसम बासन्ती हो जाये
षोशित मेहनतकष की चौखट तक तरक्की पहुंच जाये ।
एहसास रिसते जख्म का दर्द, दिल में फफोले खड़े है
मकसद नजदीकी उनसे जो तरक्की समता से दूर पड़े है ।
बिते लम्हों से नही षिकायत पूरी हो जाये अब कामना,
हे आते हुए लम्हो आस साथ तुम्हारे,
सुखद हो नवप्रभात,
सच हो जाये खुली आंखों का सपना ।

14–उपकार

नफरत किया जो तुमने क्या पा जाओगे
मेरे हालात एक दिन जरूर बह जाओगे ।
गये अभिमानी कितने आयेगे और
गरीब कमजोर को सतायेगे ।
मै नही चाहूंगा कि वे बर्बाद हो
पर वे हो जायेगे

जग जान गया है
गरीब की आह बेकार नही जाती
एक दिन खुद जान जाओगे ।

मैं कभी ना था बेवफा
दम्भियों ने दोयम दर्जे का मान लिया
षोशित के दमन की जिद कर लिया ।
समता का पुजारी अजनवी हो गया
कर्मपथ पर अकेला चलता गया ।
वे छोड़ते रहे विशबाण,घाव रिससता रहा
आंसूंओ को स्याह मान,कोरे पन्ने सजााता रहा ।
षोशित की काबिलियत का अन्दाजा ना लगा
भेद का जाम महफिलों में षोशित अभागा लगा ।
व्क्त का इंतजार है,कब करवट बदलेगा
छुर्भाग्य पर कब हाथ फेरेगा ।
मेरी आराधना कबूल करो प्रभु
नफरत करने वालो के दिलों में,
आदमियत का भाव भर दो
एहसानमंद रहूंगा तुम्हारा उपकार कर दो ।

15–सुगन्ध

जमीन पर आते ही बंधी मुट्ठियां खींच जाती है
रोते ही ढोलक की थाप पर सोहर गूंज जाता है ।
जमीन पर आते ही तांडव नजर आता है
समझ आते ही मौत का डर बैठ जाता है।
मौत भी जुटी रहती है अपने मकसद में
आदमी को रखती है भय में ।
सपने में भी डराती रहती है
जिन्दगी के हर मोढ पर मुंह बाये खड़ी रहती है ।
परछाईयों से भी चलती है आगे–आगे
आदमी भी कहां कम चाहता निकल जाये आगे ।
भूल जाता आदमी तन किराये का घर,
रूतबे की आग में कमजोर को भुजता जाता
मानव कल्याण जुटा नर से नारायण हो जाता ।

मौत जन्म से साथ लगी पीछे पड़ी रहती है
सांस को षान्त करके ही रहती है ।

सबने जान लिया पहचान लिया
जीवन का अन्त होता है
ना पड़ो जातिधर्म के चक्रव्यूह
बो दो सदकर्म और सदभावना की सुगन्ध
आदमी अमर इसी से होता है । नन्दलाल भारती

16–पीड़ा

कमजोर भय के दौर से गुजर रहा है
दीन को दीन करने का शणयन्त्र चल रहा है ।
सत्य भी आज तड़पने लगा है
अभिमान खुलेआम डंसने लगा है।
कमजोर भरे जहां में आंसू निचोड रहा है
सत्ता की रस्साकसी का दौर चल रहा है ।
गरीब षोशण–महंगाई से दबा जा रहा है ।
कमजोर का हक छीना जा रहा है
किया कोषिष तो बदनाम किया जा रहा है ।
कमजोर की आन भाती नही
बनती तकदीर बिगाड़ दी जाती यहीं ।
आज षोशित–कमजोर दहष्त में जी रहा
गरीबी के भार भेद का जहर पी रहा ।
कोई है जो पीड़ा समझ सके
तरक्की की राह दो कदम साथ चल सके । नन्दलाल भारती

17–आजादी के दाता ।

जय जय हे आजादी के दाता,तेरी याद फिर आई
लालसा अधूरी सपने पूरे छब्बीस जनवरी आयी
छाती पर भार थे घाव गहरे,सपने ने ली अंगड़ाई
जय जय हे आजादी के दाता,तेरी याद फिर आई........
तेरी आंखों में थे आंसू मेरी में ऐसी ज्योति जलायी
फैले रह गये हाथ तुम्हारे,तिंरंगा उंची उड़ान है पायी

जय जय हे आजादी के दाता,तेरी याद फिर आई........
बदल गये अब के पूत,पमार्थ की सुधि ना आयी
बिलखाता जन,आंसू अपनों के लगे बात परायी
जय जय हे आजादी के दाता,तेरी याद फिर आई........

गोरे हारे तेरे आगे कालों ने ली है अंगड़ाई
देवस्थानों के झगडें जाति–धर्म में रहे षक्ति गंवायी
जय जय हे आजादी के दाता,तेरी याद फिर आई........
भूल रहे जन–देष सेवा अपने महल रहे बनायी
मन में गहराती दरारे,दुध्मन रहे आंख दिखाई
जय जय हे आजादी के दाता,तेरी याद फिर आई........
षहादत की कसम मातृभूमि ना आंसू बहाई
देष–धर्म बन्धुत्व भाव की बहेगी गंगाा
जन–जन मुस्कायी
जय जय हे आजादी के दाता,तेरी याद फिर आई........
26 जनवरी खुषी का दिन आजाद अनुराग तिरंगा रहे फहरायी
आस आजादी का हक मिले बरोबर,तेरी याद मे आंखे भर आयी
जय जय हे आजादी के दाता,तेरी याद फिर आई........नन्दलाल भारती

18–आजादी मिली विदाई ।

आह बहाकर लहू आजादी मिली विदाई
आज खण्डित अरमान निज स्वार्थ ने धूम मचायी
आजादी की थी धुन,लाषों के ढेर नूतन मिला सवेरा
दुर्भाग्य आज न होती षोशित गरीब की सुनवायी
आह बहाकर लहू आजादी मिली विदाई.........
दिन में आंसू रैना का दर्द विह्वल
श्रम झराझर अत्याचार प्रतिपल
गुलामी के दास्तान सुन नयनों में आंसू
चह करे कराह विशमता यौवन पायी
आह बहाकर लहू आजादी मिली विदाई......
महान बोस,याद खून दो आजादी दूंगा का नारा
गांधी की आंधी अम्बेडकर की षिक्षित बनो
संघर्श करो की गूंजतह चहुंओर धारा

भगतसिंह रंग दे माई बासन्ती चोला
आज देष–जन सेवा में खोज रहे मोटी कमाई
आह बहाकर लहू आजादी मिली विदाई...........

बिसरे मायने आजादी के बूढी होती चाह
घोटाला,भेदभाव,अत्याचार कहां करे पुकार
धरती अपनी संविधान अपना
लोग है अपने ना जमती आषा की परतें
ना गंजती समता की षहनाई
आह बहाकर लहू आजादी मिली विदाई........
तरक्की की आंधी गांधी का था सपना
गरीबी,भूखमरी,बेरोजगारी,भूमिहीनता छलता यहां अपना
बिसरे जन सेवा के भाव
नित नव–नव मुखौटे है धरते
अपना देष अपनी आजादी,मांटी में रहे सोंधापन समायी
आह बहाकर लहू आजादी मिली विदाई.......

19–भूल

बड़ी भूल हुई मुझसे,सजा भुगत रहा हूं ,
निकला था खोजने फूल,षूल ढो रहा हूं ।
काबिल होता पूज्य मैं आंसू पी रहा हूं ,
कर्मपूजा पर यहां नित घाव पा रहा हूं ।
कर्मफल का हक पर लूटता देख रहा हूं,
तकदीर के नाम पर धोखा पा रहा हूं ।
आदमी आदमी है पर भेद भोग रहा हूं
अपनों के बीच बेगाना हो गया हूं ।
नकाबपोषो की महफिल बेपरदा हो रहा हूं
अपनी राह आसूं से रोषन कर रहा हूं ।
बड़ी भूल हुई विष्वास किया
उसी की सजा भुगत रहा हूं । नन्दलाल भारती 26.02.10

20– काबिलियत

लूट रही काबिलियत डूब रहा उम्मीदों का तारा
कैसा तन्त्र जहां योग्यता को ना मिलता मान
हक की छिना छपटी श्रम को मिलता अपमान
कौन सा गुनाह मधुमास में पतझड़ का सहारा
लूट रही काबिलियत डूब रहा उम्मीदों का तारा......

नसीब पर लटके ताले नर पिषाच करता गान
डूबता सूरज बना भाग्य कल पर अंधियारा
मृत्युषैय्या पर अभिलाशा नसीब का दोश सारा
चक्रव्यूह दीन अदमी के दमन का खेल सारा
लूट रही काबिलियत डूब रहा उम्मीदों का तारा......
लूट गयी उम्मीदे ना जमती आषा की परते
भेद भरा जंहा पल–पल देता घाव नया
ना देना प्रभु जन्म ऐसे जहां में
जहां योग्यता को ना मिले मान
दीन का छिन जाये अधिकार
हां प्रभु मुखौटाधारियों के बीच हो गया बेसहारा
सुन लो विनती प्रभु अब तो तूहिं एक सहारा
लूट रही काबिलियत डूब रहा उम्मीदों का तारा......नन्दलाल भारती 26.02.
2010

21– अभिषापित आदमी

अभिषापित षोशित आदमी
तरक्की दूर दुख झराझर,जीवन तन्हा–तन्हा
जीवन हुआ जंग भूमि,राह में बिछते कांटे
कर्म भले रहा महान, योग्यता का मान
भेद की जमीं पर डंसा हरदम अपमान
सच उजड़े सपने बिखरा जीवन का पन्ना–पन्ना
तरक्की दूर दुख झराझर,जीवन तन्हा–तन्हा.........
षोशित की रोटी पसीने की कमाई
वह भी होती छिनने की साजिष
कहते अमानुश झाांक ले पीछे का मेला

पेट में भूख फूटी जिनकी थी थाली सदा
चेतावत मत देख सपने कहत अभिमानी
कैसे माने बात,पली भूख खुली आंखों का सपना
मन की रोषनी से जोड़ा ज्ञान
कैसे होने दूं भेद की जमीं पर चिथरा–चिथरा पन्ना
तरक्की दूर दुख झराझर,जीवन तन्हा–तन्हा...............

भेद की दुनिया में विकास के मौके जाते छिन
हाषिये का आदमी होता जैसे बिन पानी की मीन
कर्म पाता आंसू योग्यता संग छल पल–पल है होता
साजिष षोशित को दरिद्रता के दलदल में ढकेलते देखा
जीवन दर्द का दरिया माथे चिन्ता की रेखा
अभिषापित का भविश्य पतझड़ के पात
भेद की जमीं पर जीवन का डंस गया पन्ना–पन्ना
तरक्की दूर दुख झराझर,जीवन तन्हा–तन्हा...............
ना आयी पास तरक्की कौन है दोशी
जग जान गया दोश वर्णवाद के सिर मढा गया
योग्य ज्ञानी हाषिये का आदमी भले रहा
छिन गया मौका दोशी तकदीर को कहा गया
ये है गुनाह भयावह मान रहा सारा जहां
ना करो पतझड़ का पात,
षोशित की तकदीर का पन्ना–पन्ना
तरक्की दूर दुख झराझर,जीवन तन्हा–तन्हा.........नन्दलाल भारती 20.03.2010

22– एक मिनट का मौन

सकून ही नही यकीन भी तो है
तुम पर ! हो भी क्यो ना ? यही तो कमाई है विष्वास की।
पहले या बाद में मैं रख लूंगा या तुम
दो मिनट का नही एक मिनट काफी है ।
हादषों के षहर में आज ही तो बाकी है
कल क्या होगा प्यारे ? ना तो हम जानते ना तुम ।

आदमी के बदमिजाज से जान ही गये हो
भ्रश्टाचार,आतंकवाद,क्षेत्रवाद,धमवाद जातिवाद
खाद्यानों की मिलावट,दूशित वातावरण
और दूसरी साजिषें कब मौत के कारण बन जाये
दोस्त ना तुम जानते हो ना हम
एक बात जान गये है ये साजिषो की ज्वालामुखी
कभी भी जानलेवा साबित हो सकती है ।
काष ये ज्वालामुखी षान्त हो जाती सदा के लिये
परन्तु विष्वास की परते जम तो नही रही है ।

हां सकून और यकीन तो है दोस्त
तुम मेरी और मैं तुम्हारी
मौत पर दो की जगह एक मिनट का
मौन तो रख ही लेगे कोई तूफान क्यो ना उठे
और फिर भले ही हम खो जाये ब्रहमाण्ड में
दुनिया की अमन षान्ति के लिये । नन्दलाल भारती 31.03.2010

23– हंसना याद नहीं ।

हंसना याद नही मुझे कब हंसा था पहली बार
आंख खुली तो अट्ठहास करते पाया
नफरत–तंगी और मानवीय–अभिषाप की ललकार ।
हंसना तब भी अपराध था आज भी है
षोशित आम आदमी के दर्द पर
ताककर खुद के आंगन की ओर
अभाव– भेद से जूझे कैसे कह दूं
मन से हंसा था कभी एक बार ।
पसरी हो भय–भूख जब आम आदमी के द्वार
नही बदले हैं कुछ हालात कहने भर को बस है
तरक्की दूर है आज भी आम आदमी से
वह भूख–भय भूमिहीनता के अभिषाप से व्यथित
माथे पर हाथ रखे जोह रहा बार–बार ।
सच कह रहा हूं
हंस पड़ेगा षोशित आम–आदमी जब एक बार

सच तब मैं सच्चे मन से हंसूंगा पहली बार...नन्दलाल भारती 31.03.2010

24–अमृत–बीज

कसम खा लिया है,अमृत बीज बोने का
जीवन के पतझड़ में बसन्त के एहसास का
चल पड़ा लेकर खुली आंखों के सपने ।
दर्द बहुत है यारों राह में,
हरदम आघात का डर बना रहता है
पुराने घाव मे नया दर्द उभरता है
मुष्किलों के दौर में भी जीवित रहते है सपने ।

अंगुलिया उठती है विफलता पर,
रास्ता छोड देने की मषविरा मिलती है
मानता नही जिद पर चलता रहता हूं
विफलता के आगे सफलता देखता हूं
कहने वाले तो यहां तक कह जाते है
मर जायेगे सपने, मेरी जिद को उर्जा मिल जाती है
ललकारता अमृत बीज से बोये, नही मर सकते सपने ।
कहने वाले नही मानते कहते,
मिट जायेगी हस्ती इस राह में
कहता खा लिया है कसम बोने के इरादे अपने
हस्ती भले ना पाये निखार ,ना मिटेगे सपने ।
सपनों को पसीना पिलाकर
आंसूओ की महावर से सजाकर
उजड़ी नसीब से उपजे चांद सितारों को मान देकर
चन्द अपनों की षुभकामनाओं की छांव में,
कलम थाम,विरासत का आचमन कर,
थाती भी तो यही है कलमकार के अपने ।
कैसे नही उगेगे अमृत बीज
राश्ट्र हित–मानवहित मे देखे गये
खुली आंखों के सपने । नन्दलाल भारती 05.04.2010

25–इतिहास

तपती रेत का जीवन अघोशित सजा है
वही भोग रहे है अधिकतर लोग
जिन्हे हाषिये का आदमी कहता है
आज भी आधुनिक समाज ।
फिक्र कहां होती तो
तपती रेत के जीवन पर पूर्ण विराम होता
गरीबी–भेद के दलदल में फंसा आदमी
तरक्की की दौड़ में षामिल होता आज।
कथनी गूंजती है करनी मुंह नोचती है
तपती रेत के दलदल में कराहता
हाषिये का आदमी तकदीर को कोसता है

जान गया है ना कर्म ना तकदीर का दोश है
तरक्की से दूर रखने की साजिष है
तभी तो हाषिये का आदमी
पसीने और अश्रु से सींच रहा है
तपती रेत का जीवन आज ।
तरक्की से बेदखल,आदमी की उम्मीदें टूट चुकी है
वह जी रहा है तपती रेत पर
सम्भावनाओं का आक्सीजन पीकर
तरक्की चौखट पर दस्तक देगी
जाग जायेगा विश–बीज बोने वालो के दिलों में
बुध्द का वैराग्य और हर चौखट पर
दे देगी दस्तक तरक्की
यदि ऐसा नही हुआ तो आखिर में
एक दिन टूट जायेगा सब्र रच देगा इतिहास
आज का हाषिये का तरक्की से बेदखल समाज ।नन्दलाल भारती 06.04.2010

26– चैन की सांस

भय है भूख है नंगी
गरीबी का तमाषा खिस्सों में छेद कई–कई
चूल्हा गरमाता है आंसू पीकर
आंटा गीला होता है पसीना सोखकर ।

कुठली में दाने थमते नही
खिस्से में सिक्के जमते नही
स्कूल से दूर बच्चे भूख–भूख खेलते
रोटी नही गम खाकर पलते
जवानी में बूढे होकर मरते
कर्ज की विरासत का बोझ आश्रित को देकर ।
कैसे कैसे गुनाह इस जहां के
हाषिये का आदमी अभाव में बसर कर रहा
धनिखाओं की कैद में धन तड़प रहा
गोदामों में अन्न सड़ रहा
गरीब अभागे बदल रहे करवटे भूख लेकर ।

कब बदलेगी तस्वीर कब छंटेगा अधियारा
कब उतरेगा जाति–भेद का श्राप
कब मिलेगा हाषिये के आदमी को न्याय
कब गूंजेगा धरती पर मानवतावाद
कब जागेगा देष सभ्य समाज के प्रति स्वाभिमान
ये है सवाल दे पायेगे जबाव धर्म–सत्ता के ठेकेदार
काष मिल जाता,
मैं और मेरे जैसे लोग जी लेते
चैन की सांस पीकर । नन्दलाल भारती 09.04.2010

27–_बाकी है अभिलाशा

सराय में मकसद का निकल रहा जनाजा
छल–प्रपंच,दण्ड–भेद का गूंजता है बाजा
नयन डूबे मन ढूंढे भारी है आज हताषा
आदमी बने रहने की बाकी है अभिलाशा ।
दुनिया हमसे हम दुनिया से नाहिं
फिर भी बनी है बेगानी ,
आदमी की भीड़ में छिना छपटी है
कोई मानता मतलबी कोई कपटी है
भले बार–बार मौत पायी हो आषा

जीवित है आज भी
आदमी बने रहने की अभिलाशा ।
मुसाफिर मकसद मंजिल थी परम्षक्ति
मतलब की तूफान चली है जग में ऐसी
लोभ–मोह,कमजोर के दमन में बह रही षक्ति
मंजिल दूर कोसो जवां है तो बस अंधभक्ति
दुनिया एक सराय नाहिं पक्का ठिकाना
दमन–मोह की आग
नही दहन कर पायी अर्न्तमन की आषा
अमर कारण यही,पोशित कर रखा है
आदमी बने रहने की अभिलाशा ।
सच दुनिया एक सराय है
मानव कल्याण की जवां रहे आषा
जन्म है तो मौत है निष्चित

कोई नही अमर चाहे जितना जोडे धन–बल
सच्चा आदमी बोये समानता–मानवता–सद्‌भावना
जीवित रखेगा कर्म यही मुसाफिरखाने की आषा
अमर रहे आदमियत विहसती रहे
आदमी बने रहने की अभिलाशा । नन्दलाल भारती 16.04.2010

28–गुस्ताख हो गया हूं ।

हां मैं गुस्ताख हो गया हूं
जुल्म,अत्याचार भूख–प्यास
षोशण–उत्पीड़न के विरूद्ध
वंचित के साथ उठ खड़ा होना
अगर गुस्ताखी है तो मैं बार–बार करूंगा ।
बिखण्डन,अंध–विष्वास,रूढिवाद
ठगबाजी–दगाबाजी इंसानियत के कत्ल
गरीबी,भूमिहीनता,दरिद्रता के विरूद्ध
आवाज गुस्ताखी है तो मैं करूंगा ।
पैदाइषी जंग की खिलाफत
दीन के आंसू पोंछना,दर्द का एहसास
नफरत के तूफान को थमने का संकेत

मानवीय एकता की बात करना
गुस्ताखी है तो मै करूंगा ।
उजड़ी नसीब के कारणो की तहकीकात
निर्बल को अंधबल से सुलगने से रोकना
गरीबी के कारणो को बेनकाब करना
रिसते घाव पर मलहम लगाना,
फरेब को फरेब कहना गुस्ताखी है तो,
ऐसी गुस्ताखी करने में डर नही ।
राश्ट्र के लिये खतरा साबित हो चुके
जातिवाद–क्षेतवाद की खिलाफत
स्वधर्मी समानता,बहु–धर्मी सद्भावना
देष–समाज के सुख–सम्वृद्धि की चिन्ता तपना
गुस्ताखी है तो मैं करूंगा
कलम के सिपाही यही करते रहे है
खुद तिल–तिल जलकर जहां रोषन करते रहे है
भले कोई कहें गुस्ताख मै करूंगा
क्योंकि मैं सचमुच गुस्ताख हो गया हूं । नन्दलाल भारती 19.04.2010

29–उन्नति–अवन्नति ।

उन्नति –अवन्नति की परिभाशा
जान गया है हाषिये का आदमी
वह भविश्य तलाषने लगा है
माथा धुनता है
कहता कब मिलेगी,असली आजादी।
कब तक षोशण का बोझ ढोयेगे
सामाजिक विशमता दंष कब तक भोगेगे
कितनी राते और काटेंगी करवटों में ।
रात के अंधेरे की क्या बात करे
दिन का उजाला भी डराता है
वह खौफ में भी सोचता है
कल षायद उन्नति के द्वार खुल जाये
सूरज की पहली किरण के साथ
फिर वही पुरानी आहटें
और दहकने लगती है
जीवित षरीर मे चिता की लपटें।

सोचता है कैसे दूर होगी
सामाजिक –आर्थिक दरिद्रता
कैसे कटेगा जीवन आजाद हवा पीकर
कैसे मिलेगा असली आजादी का हक
बेदखल आदमी को ।
उठ जाती है सम्भावना की लहर
बेबसी के विरान पर
मरणासन्न अरमान जीवित हो उठते है
षिक्षित बनो असली आजादी के लिये संघर्श करो
उद्धार खुद के हाथ की ताकत
दिखाने लगती है सम्भावना
सच यही तो है
उन्नति–अवन्नति के असली औजार ।
नन्दलाल भारती 21.04.2010

30–रोटी ।कविता ।

रोटी वही गोल मटोल रोटी
आटा –पानी के मिलन और
सधे परिश्रमी हाथो से पाती है
चांद सा आकार ।
रोटी के लिये सहना पड़ता है
धूप–तूफान षोशण और अत्याचार
बहाना पड़ता है पसीना भी
लम्बी प्रक्रिया से हाथ आयी रोटी
जगाती है संघर्श का जज्बा और आषा
मिटाती है भूख
जोड़ती है सामर्थ्य हाड़फोड़कर जीने का ।
रोटी का महत्व तो वही जानता है
जो रोटी के लिये रात–दिन एक करता है
पेट में भूख छाती में फौलाद
और खुली आंखो में सपना रखता है

खुद भूखा या आधी भूख में चैन लेता है
औलाद का पेट ठूंस कर भरता है ।
वो मां–बहने जानती है रोटी का संघर्श
जो कंधे से कंधा मिलाकर चतली है
खुद भूखी रहती है
परिजनों को पूछ–पूछ कर परोसती है
क्योंकि वे इन्ही में सुखी कल देखती है।
रोटी क्या है पिज्जा बर्गर ,
नोट खाने वाले ,रोटी से खेलने वाले
जहर उगलने वाले अथवा
कैपसूल खाकर सोने वाले
क्या जाने रोटी का मतलब ।
गरीब मेहनकष भूमिहीन,खेतिहर मजदूर
जानता है जिसके लिये
वह हांफता धरती पसीने से सींचता है ।

चांद सी गोल रोटी जंग है
ताकता का सामान है और दिल की धड़कन भी
सच रोटी सम्भावना है,
सच्चे श्रम और पसीने से की गयी
सच्ची आराधना है रोटी। नन्दलाल भारती 23.04.2010

31–कपड़ा

जीवन का आवरण है कपडा
जन्म का उपहार है कपड़ा
आन है मान है सम्मान है कपड़ा
पात था या आज का सूत
तन की लाज रखता है कपड़ा ।
कहने का तो बस कपडा है
रूप अनेक रखता है कपडा
देष की षान है कपड़ा
धर्म का बखान है कपड़ा ।

रंग बदलते बदल देता विधान है कपड़ा
प्रतिज्ञा कभी जीत कभी हार है कपड़ा
अक्षर–चित्र है वक्त की पहचान है कपड़ा
ओढना–बिछौना है परिधान है कपड़ा
मानव विकास की पहचान है कपड़ा ।
धर्म–कर्म का निषान है कपड़ा
बच्चे–बूढे का अन्दाज है कपड़ा
नर–नारी की पहचान है कपड़ा
भूख – प्यास है रोजगार है कपड़ा
स्भ्यता –संस्कृति परम्परा है कपड़ा ।
आचार–विचार का पुश्प है कपड़ा
विरासत और कर्म की सुगन्ध है कपड़ा
जीवन भर साथ निभाता कपड़ा
मरने पर भी साथ जाता कपडा
जीवन का अनमोल उपहार है कपड़ा । नन्दलाल भारती 23.04.2010

32–मकान

मकान मंदिर है, जहां ईष्वर के अंष विचरते है,
आत्मीय, अपनत्व और रिष्तों के रंग बरसते है
जहां से संगठित,षीतल–षान्त नेह रसधारा उठती है
ऐसी सकून की छांव को मकान कहते है ।
परिवार है बड़े–बूढों की बरगद सी छांव है मकान
जहां से फूटते है प्रेम के अंकुर और संवरता है जीवन
बरसता है सहज आनन्द, सहानुभूति और त्याग
सद् प्रयत्न निरन्तर जहां विहसते है
ऐसे जीवन के ठिकान को मकान कहते हैं ।
जहां सफलता पर बरसते है बसन्त के अब्र
असफलता पर चढते है सोधेपन के लेप
बहता है आत्मीयता और अपनेपन का सुख
जहां दुख–सुख सबके होते है

अद्भूत सुख मकान की छांव में मिलते है
जिसे पाने की परमात्मा भी इच्छा रखते है
इसीलिये ऐसे धाम को मकान कहते है।
मकान षक्ति–संगठन का प्रतीक है
लक्ष्य है मकान ,जहां फलती–फूलती है
सभ्यता संस्कृति और नेक परम्परायें
पाठषाला और रिष्तों का आधार है मकान
संस्कार है,आचार–विचार है पुरखो की विरासत
मानवतावाद की धरोहर है मकान
मकान में परमात्मा के दूत बसते है
सच इसीलिये मकान कहते है ।
तिलिस्म है जीवन का मकान
जीवन है,सपना हैं मकान
जिसके लिये आदमी जीवन के
बसन्त कुर्बान कर देते है
श्रम की ईंट–माटी,परिश्रम के गारे से खड़े
ठिकान को मकान कहते है।

मकान जहां जीवन संगीत बजता है
मंदिर की घण्टी मंस्जिद की अजान
बुध्दम् षरणम् गच्छामि और
गुरूग्रथ साहब के बखान की तरह
मानवतावाद के स्वर जहां से उठते है ।
इसीलिये मकान को मंदिर कहते है । नन्दलाल भारती 28.04.2010

33–बुद्ध हृदय

आंख खुली हृदय विस्तार पाया
ढूढना षुरू कर दिया इंसान
जारी है तलाष आज तक ।
बूढा होने लगा हूं वही का वही पड़ा हूं
इरादा नही बदला है
नही खत्म हुई है तलाष आज तक ।

भूले भटके लोग मिल भी जाते है
मान देने लगता हूं
उम्मीद टिके चेहरा बदल जाता है
यही कारण तलाष अधूरी है आज तक ।
उपदेष देने वाले मिल जाते है
खुद को धर्मात्मा दीन दरिद्रों का मसीहा
इंसानियत का पुजारी तक कहते है
यकीन होने लगता है तनिक –तनिक
बयार उठती है चोला उड़ जाता है
यकीन लहूलुहान हो जाता है
पता लगता है इंसान के वेश में षैतान
सच यही कारण है कि
सच्चा इंसान नही मिला आज तक ।
मन ठौरिक कर आगे बढता हूं
इंसान सरीखे लोग मिलते है टुकड़ो में
कोई धर्म का कोई उंची जाति का, कोई धन का
कोई बल का कोई पद का प्रर्दषन करता है
सच्चे इंसान का दर्षन नही होता
यही कारण है कि मैं हारा हुआ हूं आज तक ।

हार नही मानता ,राह पर चल रहा हूं तलाष की
जिस दिन वंचितों,दीन दरिद्रों के उद्धार के लिये
मानवीय एकता के लिये त्याग करने वाला
बुद्धहृदय मिल गया इंसान
समझ लूंगा मेरा जीवन सफल हो गया
मिल गये भगवान
मेरी तलाष पूरी हो जायेगी
नहीं हुई तो हार नही मानूंगा
चलता रहूंगा रचता रहूंगा जीवन पर्यन्त
बुद्धहृदय मिलता नही जीवन में जब तक । नन्दलाल भारती 13.05.2010

34––मजदूर हताष है ।

चकाचौंध,फलित ,सिंचित खेत हरे–भरे

खेतिहर–मजदूरों के पसीने की बूंद –बूंद पीकर
अनाज मालिको के गोदामों भरता ठसाठस,
नोट तिजोरी में मजदूर की तकदीर चौखट पर कैद
खेतिहर–मजदूर की दुर्दषा से खेत गमगीन
बेचारा–लाचार मजदूर हताष है ।
कोठी में बैठा मालिक चिन्तित,मुनाफे को लेकर
मजदूर आतंकित जरूरतों को देखकर
तन को निचोड़ पसीना बनाता
दरिद्रता के अभिषाप को धो नही पाता
खेत कमासूत की बदहाली पर उदास है
ना मुक्ति की राह देख मजदूर हताष है ।
खेत नीति सामन्तवाद की जीवित जागीर
भूमिहीन–खेतिहर मजदूरों की कैद तकदीर
मजदूरों के ठिले–कुठिले खाली–खाली
बेरोकटोक घर में धूप की आवा–जाही
तन का कपड़ा जर्जर फटा पुराना
सपूतों की बदहाली पर खेत गमगीन
लोकतन्त्र के युग में मजदूर हताष है ।

कौन आयेगा आगे ताकि,
मजदूरों के भाग्य जागे
कौन उठायेगा लोकनायक जयप्रकाष,विनोवा भावे का हथियार
यही करेगा भूमिहीन खेतिहर मजदूरों का उद्धार
हो गया षंखनाद,सच खिलखिला उठेगा खेत
छंट जायेगे विपदा के बादल
तप–ना होगा खेतिहर–भूमिहीन–मजदूर हताष । नन्दलाल भारती 14.05. 2010

35– सब कुछ यहां नही खत्म होता ।

जड़ खोदने की कोषिषें तो बहुत हुई,
हो रही है निरन्तर गुमान की कमान पर

सूखी नही जमीन से जुड़ी
दुआओं की आक्सीजन पर टिकी जड़े
हां कुछ खत्म तो हुआ सपने टूटे
दूसरों के हाथों जो हो सकता था
हुआ पर सब कुछ खत्म नही हुआ ।
हुनर दिखाने का मौका छिन गया
नही छिना जा सका हुनर,
क्योंकि छिनने की चीज नही
बचा रहता है स्मृति के सागर में
रचवा देता है वक्त अश्रु की लहरों से
बन जाती है निर्मल पहचान
सच है सब कुछ नही खत्म होता ।
आदमी सें षैतान बना लाख खत्म करना चाहे
ख्वाब रौदे जाते महफिल में जलाये जाते
कैद नसीब आजाद नही की जाती आज भी
फरेब नये–नये अख्तियार किये जाते
फूटी किस्मत वाला ना निकले पाये आगे,
निकलने वाला निकल जाता है हौषले की उड़ान भरकर
करने को बहुत कुछ होता है
अदमी से षैतान बना लाख बोये कांटे
उम्मीद के सोते नही सूखने चाहिये
क्योंकि सब कुछ खत्म करना
टादमी से षैतान बने के बस की बात नही ।

मौत भी नही खत्म कर सकती जीवन की उम्मीदे
आदमी के बस की बात कहां
सब कुछ खत्म करना
ठण्डे चूल्हे में भी आग सुलगती है
तवा गरम होता है भूख मिटती है
तप–संघर्श करना पड़ता है कुछ पाने के लिये
कर्म के साथ उम्मीद की जुगलबन्दी देती है
अस्तित्व को निखार, गढती है जीने का सहारा
धैर्य और हौषले की आग दिल में सुलगाये रखना चाहिये

सच है सब कुछ यहां नही खत्म होता
और नही किया जा सकता है । नन्दलाल भारती 14.05.2010

37– जनतन्त्र पर राजतन्त्र भारी ।

जिस मधुवन में बारहो माह पतझड़ हो
षोशितजन के लिये
उतान तपता रेगिस्तान ख्वाब तोड़ने के लिये
ऐसी जमीं पर पांव कैसे टिकेगे ?
वही दूसरी ओर जहां झराझर बसन्त हो
षिखर लूटने और दमन नीति रचने
तरक्की हथियाने वालो के लिये
ऐसे मे कैसे भला होगा वंचितजन का ?
बयानबाजी है जो विकास की आज
चुगुली करती है कई कई राज
तरक्की की ललक में जी रहा गरीब वंचित
गिर–गिर कर चलता रफतार के जमाने में
दफन आंखों में ख्वाब सीने में दर्द के तराने है
कैसे चढ पायेगा विकास की सीढी गरीब वंचित ?
विकास की लहर हाषिये के आदमी से दूर है
काबिलियत पर ग्रहण का पहरा है
जनतन्त्र पर राजतन्त्र भारी रूपहला
षोशित की चौखट पर भूख–भय छायी
दूसरी ओर हर घड़ी बज रही षहनाई
करो विचार कैसे होगा उध्दार ?

जनतन्त्र के नाम राजतन्त्र करेगा राज
विश–बीज बोने वाले कब तक हड़पेगे अधिकार
भेदभाव से सहमा षोशित कब तक पोछेगे आंसू
विकास से बेदखल कब तक करेगे इन्तजार ?
अरे कर लेते निष्पक्ष विचार । नन्दलाल भारती 14.05.2010

38– वक्त कहेगा षैतान

कैसी रीति फूल बना जो श्रृंगार
रौदा जाता पांव तले जैसे

श्रमिक– गरीब–लाचार ।
फूल श्रमिक दोनो की एक दास्तान,
चढता सिर एक दूसरा भगवान
हाय ये कैसी रीति पाते अपमान।
श्रमिक पसीने से जीवन सींचता
फटे हाल ,अत्याचार सहता
फूल धारण कर आदमी इतराता,
यौवन ढलते कुचल जाता ।
कैसी लूटी नसीब यौवन कुर्बान
हिस्से बस अभिषापित पहचान ।
सीख गया रस निचोड़ना आदमी
फूल ,श्रमिक या वंचित आदमी ।
छल–बल की नीति नही है न्यारी
कुचला नसीब जो वही अत्याचारी ।
एक फूल है जगत् का श्रृगार
दूसरा श्रमिक गरीब–वंचित तपस्वी
जीवन की धडकन जान
ना लूटो नसीब कमजोर की
फूल और श्रमिक दुनिया कुर्बान
सच ना माने तो वक्त कहेगा षैतान............ नन्दलाल भारती 20.05.2010

39– समय का पुत्र

समय का पुत्र मैं अमीर भी हूं,
दौलत के टीले पर बैठा तो नही
तंगी की छांव में अमीर हूं
क्योंकि समय का पुत्र हूं ।
मानता हूं पद–दौलत दूर हैं

तंगी की छेंदती छांव में
कद का धन तो भरूपर है
क्योंकि मैं समय का पुत्र हूं ।
खैर धन की बहार का भी सुख है
दुख भी तो है
बहार छंटते ही चढ़ जाती है
परायेपन की परत
बिसार देते है जो कल खास थे
याद रहता हूं मैं
फकीरी में अमीरी रचने वाला
क्योंकि मैं समय का पुत्र हूं ।
संघर्शरत् रूखी–सूखी खाया
सकून का पानी पीया तंगी की छांव में
सकून है आज कल पर यकीन
क्योंकि मैं समय का पुत्र हूं ।
गैरो की पीड़ा को अपनी कहा
दर्द में रचा–बसा
पतझड में बसन्त,धूल में फूल ढूढ लेता हूं
खुद का खुष रखने के लिये
जमाने को देने के लिये
कलम से उपजी अनमोल पैदावार
मैं यही दे सकता हूं
क्योंकि मैं समय का पुत्र हूं । नन्दलाल भारती 21.05.2010

40–उम्र का कतरा–कतरा

पहचान चुका हूं बद्नियत आदमी को
देख रहा हूं छल–बल का ताण्डव
योग्यता पर प्रहार तड़पते परिश्रम को

फिर भी ताल ठोंक रहा हूं ।
मैं जानता हूं नसीब कैद,हाथ तंग है
योग्यता नही श्रेश्ठता का दबदबा है
पुराने घाव का जानलेवा दर्द है
रात के अंधेरे की पंक्षी की तरह
उजाले में रास्ता तलाष रहा हूं ।
मैं जानता हूं
भेद–बृक्ष की जड़े उखाडना कठिन है
समुद के पानी को मीठा करने की तरह
फिर भी सम्भावना की आक्सीजन पर
उम्र का कतरा–कतरा कुर्बान कर रहा हूं ।
मानता हूं अदना हूं विषाल मीनारों के सामने
आदमी होने का सुख नही पा सकूंगा अकेले
षोले तो सुलगा सकता हूं,उंच–नीच की जमीन पर
कैद नसीब के आंसू से अस्तित्व सींच सकता हूं ।
मानता हूं बूंद–बूद से सागर भरता है
तिनके–तिनके से बनती है षक्ति,
आती है क्रान्ति,झुक जाता है आसमान
आदमियत के फिक्रमन्द यही कर रहे है
मैं भी उम्र का कतरा–कतरा कुर्बान कर रहा हूं ।
मानता हूं उम्र का मधुमास सुलग रहा है
सुलगता मधुमास बेकार नही जायेगा
करे नसीब कैद,चाहे जितना कोई बोये भेद,
मुस्कराये षोशण के खूनी टीले पर बेखौफ
आदमी होने का सुख मिलेगा,आदमियत मुस्करायेगी
ऐसे सुख के लिये आजीवन,
उम्र का कतरा–कतरा कुर्बान करता रहूंगा । नन्दलाल भारती 24.05.2010

41– **समता का अमृत,**

चक्रव्यूह टूट नही रहा है आधुनिक युग में
फैलती जा रही है जिन्दगी की उलझने
उलझनों के बोझ तले दबा–दबा

जीवन कठिन हो गया है ।
उलझनो का तिलिसिम बढा रहा है
जीने का हौषला
दे रहा है हार पर जीत का संदेष
यही है उलझन की सुलझन
लेकिन आदमी द्वारा रोपित चक्रव्यूह को
जीत पाना कठिन हो गया है आधुनिक युग में ।
उलझने जीवन की सच्चाई है
चक्रव्यूह आदमी की साजिष
एक के बाद दूसरा मजबूत होता जाता है
ताकि कायनता का एक कुनबा बना रहे
दोयम दर्जे का आदमी
सच उलझने सुलझ जाती है
आदमी का खड़ा चक्रव्यूह टूटता नही
करता रहता है अट्हास जाति–धर्म के भेद की तरह ।
चक्रव्यूह में खत्म नही होता इम्तिहान
बढती जाती है मानवीय समानता की प्यास
चक्रव्यूह के साम्राज्य में भी
मानवता के झुरमुठ में झांकता रहता है समता का अमृत,
यही तोडेगा चक्रव्यूह का तिलिसिम एक दिन । नन्दलाल भारती 25.05.2010

42– प्रार्थना

मानव काष प्रार्थना स्वीकार लेते
आदमी की चौखट पर दस्तक देते
वैसे जैसे ॠतुये देती है
विकार त्यागकर,कल्याण भाव से
फसलों,छोटे–बडे बृक्षो के मस्तक पर ।
चल हो या अचल,नर हो या पषु
सभी करते है स्वागत ॠतुओं का
ॠतुयें नहवाती है नहछुआ
करती है प्रकृति का नव श्रृंगार
पोसती है जीवन अमृत बूंदे पीलाकर ।

आदमी दूर आदमियत के अमृततत्व से
आदमी के रूप प्रभु के दूत हो

तुम्हारा आहवाहन है
आओ आदमी की दहलीज तक
गुमान की दहलीज लांघकर
छा जाओ बसन्त की तरह ।
हे आदमी आदमी के दिल पर बो दो
आदमियत के रिष्ते का सोंधापन
अभिषाप का बोझ ढो रहे
आदमी से लिपट जाओ वर्शा की बूंद बनकर
कुसुमित हो जायेगा आदमियत का सोंधापन ।
हे आदमी प्रभु के दूत हो तुम
रेगिस्तान की तपती रेत नही
फैला दो बाहें कस लो दबे–वंचित आदमी को
जैसे राम ने भरत को कसा था बसन्त बनकर ।
गवाह रहेगा वक्त तुम्हारे ईष्वरत्व का
काष तुम मेरी प्रार्थना स्वीकार लेते
अभिमान को भूलकर । नन्दलाल भारती 25.05.2010

43–उम्मीद

उम्मीद पर उम्मीद जीवन रस धार
गैर–उम्मीद टूटी हिम्मत डूबे मझधार ।
जीवन का दुख–सुख ओढना–विछौना
उम्मीद पर उंगली रिष्ता हुआ बौना ।
उम्मीद बोती निराषा में अमृत–आषा
जन–जन समझे उम्मीद की परिभाशा ।
उम्मीद के समन्दर में जीवित है सपने
टूटी उम्मीद बिखरी चाहत बैर हुए अपने ।
उम्मीद है बाकी पतझड में बरसे बसन्त
उम्मीद का ना कोई ओर–छोर ना है अन्त ।
उम्मीद विष्वास बन जाते जग के बिगड़े काम
मंदिर,मस्जिद,गिरिजाघर बुद्ध का कहे पैगाम ।
उम्मीद जीवन या दूजा नाम धरे भगवान
उम्मीद है जीवन की डोर, टूटी हुआ विरान ।

मैने भी थाम लिया है उम्मीद का दामन
चली तलवार बार–बार नसीब बनी रेगिस्तान ।

काबिलियत का कत्ल हक पर सुलगे सवाल
लूटी नसीब सरेआम खड़ा तान उंचा भाल ।
अभिमान दहके फूटा षोला विश समान
उम्मीद के दामन लिपटा गढ गयी पहचान।
उम्मीद वन्दनीय गाड,खुदा प्रभु का प्रतिरूप
मान लिया मैने लाख बोये कोई विश–बीज
जमी रहे परते उम्मीद की छंट जाएगी धूप । नन्दलाल भारती 01.06.2010

44–सिलसिला

ये लोग कौन है आदमी को ,
धर्म–जाति–वंष की तुला पर आंकने वाले
आदमी तो आदमी है
बस नर–नारी की दो जातियों में विभाजित है
फिर विवाद कैसा ?
आंकना है तो आंको ना,
कर्म,ज्ञान कद की योग्यता को और
मानवजाति के हितार्थ दिेये अवदान को
काल के ताज पर यही विराजते है ।
खण्डित लोग बो रहे है विश
धर्म–जाति–वंष के श्रेश्ठता के गुमान
कर रहे है बेखौफ गुनाह
कही घर–परिवार सुलगा दिये जाते है
दिल में डाल दी जाती है दरारें
ये सिलसिला खत्म नही हो रहा है
ना जाने क्यों ?
दुनिया सिमट गयी विज्ञान के युग में
एक ओर आदमी तराष रहा है तलवार
धर्म–जाति–वंष के नाम
भ्रम में कई बेगुनाहो की बलि दी जाती है
कईयों की तकदीर उजाड़ दी जाती है
कईयों की कैद कर ली जाती है नसीब
कई अभागों को बना लिया जाता है गुलाम

सुख छिन लिया जाता है आदमी होने का
आदमी के हाथों ये गुनाह क्यों?
कब तक बंटता रहेगा आदमी
कब तक अपवित्र रहेगा कुये का पानी
कब तक अछूत रहेगा आदमी
कब खुलेगे तरक्की के द्वार
कब होगी आदमियत की जयकार
कब पायेगा अधिकार आमआदमी
काष ये सिलसिला चल पड़ता ... नन्दलाल भारती 02.06.2010

45–विरोध

तल्ख बयानबाजी हुनर का विरोध
आखिरी आदमी के अरमानों का कत्ल
व्यक्ति या वर्ग खास के लिये
तोहफा हो सकता है परन्तु
आखिरी आदमी देष और
सभ्य समाज के लिये विशधर ।
आखिरी आदमी कायनात का पुश्प है
कलिया सुख जाती है पुश्प बनने से पहले
सुगन्ध पर लगे है पहरे
कब जवान हुआ बूढा हुआ पता चला
आखिरी आदमी को सहानुभूति नही,
हक की दरकार है ।
आखिरी आदमी की योग्यता कम आंकी जाती है
विषेशता नजर नही आती है
अंधेरे में कैद रखने की साजिष चलती रहती है
घमासान 21वीं सदी के उजाले में ।
हक की बयार स्वार्थ बस चल पड़ती है
आस उजास में पंख फड़फड़ाने लगती है
भूचाल आ जाता है,जंग छिड़ जाता है
फिर एकदम सब कुछ जम जाता है पाशाण की तरह
विरोध सदियों से चल रहा है
तभी तो 21वी सदी में आदमी अछूत है ।

तरक्की की बाट जोह रहे को हक चाहिये
काषी से संसद तक, जंगल से जमीन तक
वह उपजा सकता है धरती से सोना
भर सकता हैं सूखती नदियों में जल
बहा सकता है दूध–घी की गंगा
कायनात का अमृत बीज है आखिरी आदमी
कुसुमित होना है उसे ,
हक की दरकार है विरोध की नही । नन्दलाल भारती 03.06.10

46–समता के सागर

समता के सागर तथागत
तनिक मेरी चौखट पर दस्तक दे जाओ ना
मां तो आंखे बन्द कर ली हमेषा के
तरक्की की बांट जोहते–जोहते
पिता दृढ है मेरे प्रति सपनों को लेकर
योग्यतायें बौनी हो गयी है
जीवन के बसन्त में पतझड़ पसर गया है ।
समता के सागर तथागत
गांव आना वहां भी स्वागत है
मंदिर से मोह भंग तो हो गया है
रस्मो –रिवाजो से नही
दूल्हे को घोड़ी पर चढने से रोकाा जाता है
महिलाओं पर अत्याचार होता है
दबे कुचले तबके षोशण होता है बेखौफ
खुलेआम चीर हरण तक हो रहा है
कमजोर के कुत्ते के भौके देने पर
कत्ल कर दिया जाता है षोशित आदमी का
कानून कायदे तो है प्रजातन्त्र में पालन कौन करें ?
समता के सागर तथागत
आओ ना कभी महावीर को साथ लेकर ।
तथागत तनिक फुर्सत निकालो
सामाजिक–आर्थिक दषा निहारो षोशितों की
21वी सदी में अछूत है,भूमिहीन है

पषु से बद्तर जीवन जीने को मजबूर है
मेहनतकष के श्रम से उपजे सोने पर
जाम झलक रहा है महलों में,
दूसरी ओर चूल्हा गरम करने की चिन्ता है
क्या तुमने इसी लिये महल छोड़ा था
समता के सागर तथागत एक बार आ जाओ ना ।
तुम आजाओगे ना तरक्की के बिहड़ में
बर्बाद की जा रही बडी आबादी की उम्मीदे
आबाद हो जायेगी
अस्तित्व के लिये तड़पते लोग
चक्रव्यूह में तबाह हो रही जिन्दगियां
संवर जायेगी, पथरायी आंखे चमक उठेगी
धरती का भाग्य जग जायेगा
षोशित वंचित का उद्धार हो जायेगा
तथागत महावीर को साथ लेकर,
आ जाओ ना दया करूणा,त्याग ,समता के सागर ।नन्दलाल भारती 03.06.10

47–मन की चिन्ता

चंचल मन को समझता हूं बार–बार
नही सुनता मेरी एक बार
कहता हूं कभी–कभी तो विहस लिया कर
कहता है कैसे विहसूं तू बता दे मेरे आंका
सपनों के टूटने की चरचराहट कान में जैसे ,
पिघला षीष घोल रही हो,
मन्नतें ना पूरी हो रही हो
दीन–दुखियों के कुनबे में पसरा हो फांका
विपदा को माथे पर थामें कैसे नृत्य करूं ।
सन्तोश की आक्सीजन परोसता हूं
वह फूट पड़ता है,समझाने लगता है,
कहता है नासमझ ना बन
ठगा–थका तड़प रहा है हक से दूर
बसन्त में पतझड़ का अतिक्रमण
तू कहता है मैं विहस पड़ू कैसे ?

कोषिष करता हूं मन को समझाने की
बिगड़ी नसबी की कहानी है
कब तक आंसू में डूबा रहूंगा
साथ चले षिखर चढ गये उनकी नसीब है
मन कहता है तकदीर को क्यो दोश देता है बावले ?
कौन सी कमी है तुझमें,
षिक्षित है संघर्शषील है परिश्रमी है
तुम्हारी उन्नति के रास्ते बन्द क्यों ?
सच तो ये है कि
कमजोर को कमजोर बनाये रखने की साजिष है । नन्दलाल भारती 04.6. 2010

48– सुलगते सवाल

पद दलित अपराध तो नही
हो गया है उपर उठे श्रेश्ठ की निगाहों में
पददलित को आंका जाता है गुलाम
क्यो ना हो कई गुना अधिक योग्य
योग्यता बौनी है श्रेश्ठता के आगे आज भी।
श्रेश्ठ के गुमान में हो रहा है अपराध
हो रहा है अभिषापित छोटे पद पर
काम करने वाला उच्च षिक्षित आदमी
धकिया दी जाती है बड़ी–बड़ी डिग्रियां
और उंचा कद भी ।
श्रेश्ठता होती है छांव जमाने के लिये
दुर्भाग्य करने लगी है गुनाह बरसाने लगी है आग
पद–दलित का भविश्य तबाह करने के लिये
मान लेता है जन्मसिद्ध अधिकार
षोशण,उत्पीड़न और उपभोग का
श्रेश्ठता के खंजर से जीतता ओहदेदार।
भूल जाता है पददलित सजा नही व्यवस्था है
कुव्यवस्था के चक्र में अभिषाप
सफलता और सुख की आस में
मेहनत, लगन,ईमानदारी के बदले
पददलित पाता है प्रताड़ना भोगता है अभिषाप ।

दुर्भाग्यबस पद–दलित –दलित हो गया
आ गया रूढिवादी व्यवस्था से आच्छादित
संस्था की चाकरी में तो समझो
जीवन का बसन्त हो गया पतझड़
हिस्से की तरक्की बदल गयी रास्ता ।
यही तो चल रहा है गोरखधंधा
योग्यता घायल है रूढिवादी व्यवस्था में
और तरक्की के षिखर है पैदाइसी श्रेश्ठता
हक से बेदखल पददलित की उम्र का
बसन्त हो रहा है अभिषापित ।
निरापद कब तक काटेगा सजा,बिन गुनाह की
कब तक तड़पेगी योग्यता
कब तक अवरूद्ध रहेगी तरक्की
कब तक टूटेगे खुली आंखों के सपने
कब तक भंग होगी जीवन की तपस्या
कब तक पददलित रहेगा अभिषापित
क्या कभी होगे हल ये सुलगते सवाल
क्या पद–दलितों को मिलेगा खुला आसमान? नन्दलाल भारती 04.06.2010

49– वक्त के कैनवास पर ।

छांव को छांव मान लेना भूल हो गयी
परछाईयां भी रूप बदलने लगी है
दाव पाते कलेजा चोथ लेती है
कहां खोजे छावं अब तो,
छांव भी आग उगलने लगी है ।
छांव की नियति में बदलाव आ गया है
वह भी षीतलता देती है पहचानकर
छांव में अरमानों का जनाजा सजने लगा है
कत्ल का पैगाम मिलने लगा है ।
मुष्किल से कट रहे बसन्त के दिन
षामियाने से मातम फुफकारने लगा है
उम्र की भोर में षाम पसरने लगी है
तमन्ना थी विहान होगा सजेगे सितारे
कलयुग में नसीब तड़पने लगा है ।
मधुमास को मलमास डंसने लगा है
नही तरकीब कोई चांद पाने के लिये
उम्र गुजर रही सद्कर्म की राह पर

बहुरूपिये छांव ने दगा है किये,
बेष्याा के प्यार की तरह,
आदमी छांव की आड़ धूप बोने लगा है ।

खौफ खाने लगा है ना विदा हो जाऊं जहां से
छांव से सुलगता हुआ सपनों की बारात लिये
ऐसा कैसे होगा? भले जमाना ना सुने फरियाद
फरियाद करूंगा कलम से वक्त के कैनवास पर
लिखूंगा बेगुनाही की दास्तान
भले कत्ल कर दिये जाये सपने
मैं सम्भावना में कर लूंगा बसर
कलम थामे कल के लिये । नन्दलाल भारती 06.06.2010

50– सम्मान की तलाष ।

अंग्रेज भाग गये सिर पर पांव रखे दषको पहले
परन्तु सम्मान की तलाष पूरी नही हुई
हाषियें के आदमी की ।
राजनीति के उथल–पुथल के दौर में
नगाड़ों का षोर सुनाई पड़ जाता है
समानता के बादल तनिक दर के लिये आते है
फिर एकदम से छंट जाते है
सामाजिक ठेकदारो की फुफकार के आगे ।
षोर थम जाता है पांच साल के लिये
समानता का ऐलान मौन हो जाता है
सत्ता के गलियारे में चल पड़ता है घमासन ।
भूल जाती है समानता का वादा
एजेण्डे से गायब हो जाती है समानता
पसर जाता है घनघोर अंधियारा ।
जातिभेद का जहर कर रहा षर्मिन्दा
विधान सवंधिान में सर्वसमानता का जोर
भारतीय समाज में जातिवाद का षोर
दबे–कुचलों की सरकारी मदद का विरोध पुरजोर
सामाजिक–आर्थिक समानता से दुत्कार
षोशित समानता के लिये हर कुर्बानी को तैयार ।
भेदभाव उस सत्तावान की याद है

जिसने बोया है बीज नफरत का सत्ता के लिये
हाषिये के आदमी को उबरने नही देता आज भी
बसर कर रहा दोयम दर्जे का आदमी होकर
अपने गांव,अपनी माटी और अपने देष में ।

भगवान बुद्ध,महावीर,गुरूनानक की क्रान्ति अधूरी है
जोह रही है बांट युगों बाद पूरी होने के लिये
सामाजिक और राजनैतिज्ञ नेता वाक्‌युद्ध छेड़ते है
फिर दोयम दर्जे के आदमी की व्यथा भूल जाते है
पांच साल के लिये ।
आते चुनाव खुरचते है घाव सत्ता के लिये
क्या इस तरह कभी मिटेगी नफरत की खाई ?
पूरी होगी चौथे दर्जे के आदमी के सम्मान की तलाष। नन्दलाल भारती 07.6.
2010

51– दृश्टिवृश्टि ।

हादषा याद रहेगा खून के लिये तो नही था
कम भी ना था चहुंतरफा आक्रमण,
पहचान पर कर्मषीलता,व्यक्तित्व
वफादरी का खून था वह हादषा ।
गूंज रहा था आज के कंस का अट्‌हास
कलेजे को छेद कर बोया गया आग
क्योंकि श्रमिक ढूंढ रहा था अस्तित्व
दे रहा था अग्नि परीक्षा बार–बार
सही उत्तर के बाद भी कर दिया जा रहा था फेल
तरक्की भागी जा रही थी कोसों पीछे
साबित कर दिया जा रहा था बेकार
मजबूर किया जा रहा था करने को बेगार
यही हो रहा है सदियों से कमजोर के साथ
नही आ रही तरक्की हाथ
पांच जून का हादषा गवाह है
अधिकार हनन दमन और संघर्श का
कैसे बयान करूं हादषे का समझ लीजिये
अधपकी फसल पर ओलावृश्टि
कर रही है तबाह दृश्टिवृश्टि दबे–कुचलो का जीवन। नन्दलाल भारती 08.6.
2010

52 –आराधना

करवटे बदल–बदल का रात बिताना
अतंड़ियों के घमासान को पानी से षान्त करना
रात बितते सूरज का पूरब से चढते
कलेवा के लिये बर्तन टटोलते बच्चे,
चूल्हा गरम करने के लिये संघर्शरत मातृषक्ति
काम की तलाष में भटकता जनसमुदाय़
ऐसे सुबह की मेरी मनोकामना नही
नाहि आराधना ही ।
मै चाहता हूं ऐसी सुबह
रात बितने का षंखनाद करे मुर्गे की बाग
सुबह का सत्कार पंक्षियों करें की चहचहाट
खुषहाली स्कूल जाते बच्चों के पादचाप
संगीत काम पर जाते कदमताल
घर–आंगन चौखट पर खुषहाली के गीत
आदमी में अपनेपन की ललक
राश्ट्रधर्म के प्रति अपार आस्था
कल के सुबह की रोषनी के साथ
मन–मन में आ गया मन भर विष्वास
तो मान लूंगा पूरी हो गयी मनोकामना
सफल हो गयी जीवन की आराधना
सुबह के इन्तजार की । नन्दलाल भारती 08.6.2010